IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

चरणदासी सम्प्रदाय (शुक सम्प्रदाय) की उपासना पद्धति और वर्तमान शाखा

पवन कुमार साव
शोधार्थी, कल्याणी विश्वविद्यालय
नदिया, पश्चिम बंगाल

सारांश

अठारहवीं शताब्दी के भारतीय भक्ति आंदोलन में संत चरणदास (1703–1782 ई.) द्वारा प्रवर्तित 'चरणदासी सम्प्रदाय' (जिसे शुकदेव मुनि की गुरु-परंपरा के कारण 'शुक सम्प्रदाय' भी कहा जाता है) एक विशिष्ट वैचारिक और व्यावहारिक समन्वय प्रस्तुत करता है। इस सम्प्रदाय की मुख्य पीठ दिल्ली में स्थापित हुई, जबकि इसका उद्गम स्थल डेहरा, अलवर, राजस्थान रहा है। इस सम्प्रदाय की अद्वितीय उपासना पद्धति तथा समकालीन परिदृश्य में इसकी वर्तमान संगठनात्मक शाखाओं का प्रभाव सम्पूर्ण भारत पर रहा है। चरणदासी सम्प्रदाय की साधना पद्धति की सबसे बड़ी विशेषता सगुण और निर्गुण भक्ति का अपूर्व समन्वय है। जहाँ एक ओर दार्शनिक स्तर पर ईश्वर को घट-घट वासी, निराकार और निर्गुण ब्रह्म माना गया है, वहीं व्यावहारिक धरातल पर श्रीमद्भागवत पुराण को आधार बनाकर श्रीकृष्ण और राधा की युगल सरकार के रूप में सगुण उपासना की जाती है। संत चरणदास के जीवनकाल में ही सम्प्रदाय का विस्तार दिल्ली, राजस्थान (मत्स्य क्षेत्र), हरियाणा और उत्तर प्रदेश तक हो गया था। इनके कुल १०८ प्रमुख शिष्य थे, जिनमें से ५२ शिष्यों ने देश के विभिन्न हिस्सों में स्वतंत्र गद्दियों या शाखाओं की स्थापना की, जिन्हें सम्प्रदाय में 'थांभा' कहा जाता है। वर्तमान में इसके अनुयायी दो श्रेणियों में विभाजित हैं: विरक्त (साधु) जो पीले वस्त्र धारण करते हैं, ललाट पर गोपीचंदन का लंबा तिलक लगाते हैं तथा तुलसी की माला रखते हैं; और संसारी (गृहस्थ) जो घरेलू जीवन में रहकर ४२ नियमों का पालन करते हैं। समकालीन समय में इस सम्प्रदाय के अनुयायियों में भार्गव, ब्राह्मण और वैश्य (बनिया) समुदाय की बहुलता देखी जाती है। चरणदासी या शुक सम्प्रदाय की महत्ता इस बात में है कि इसने रूढ़िवादिता और आडंबरों का विरोध करते हुए आंतरिक शुद्धता (योग) और बाह्य रस (सखी भाव की भक्ति) का ऐसा मार्ग तैयार किया, जो आज भी अपनी जीवंत शाखाओं और सात्विक आचार-संहिता के माध्यम से प्रासंगिक बना हुआ है।

मुख्य शब्द

गुरु शिष्य परम्परा, बिन्दु कुल, नाद कुल, सगुण, निर्गुण, रूपसगुणोपसना पद्धति, योग साधना, हठ योग, शून्यवाद, प्रेमा भक्ति।

अध्ययन क्षेत्र

हिन्दी साहित्य के इतिहास में चरणदासी सम्प्रदाय को 'संत मत' के अंतर्गत विशेष स्थान मिला है, इसकी साहित्यिक संपदा पर स्वतंत्र और व्यापक शोध की आज भी अपार संभावनाएं मौजूद हैं। यह शोध क्षेत्र यह समझने में मदद करेगा कि कैसे इस सम्प्रदाय ने रीतिकाल की पतनोन्मुख प्रवृत्तियों के बीच हिन्दी साहित्य की सात्विक और लोक-कल्याणकारी आत्मा को बचाए रखा।

प्रस्तावना

चरणदासी संप्रदाय के संस्थापक स्वामी चरणदास थे। इस संप्रदाय को चरणदासी संप्रदाय के नाम से जाना जाता है। चरणदास ने अपनी रचना 'भक्ति सागर' में अपने गुरु का नाम शुकदेव बताया है और इस ग्रंथ में इन्होंने गुरु महिमा का मनोरम वर्णन किया है। इस ग्रंथ के आरम्भ में ही चरणदास ने गुरु महिमा को स्थापित करने के लिए श्री शुक मुनि राज अष्टक का निर्माण किया है।

इन्होंने इस संप्रदाय का नाम शुकदेव मुनि का संप्रदाय स्वीकार किया है। इसलिए इस संप्रदाय को शुक संप्रदाय के भी नाम से जाना जाता है। भारत में चरणदासी संप्रदाय की स्थापना का जो समय था, वह सामाजिक और राजनीतिक दृष्टिकोण से बहुत उथल-पुथल का समय था। यह समय विशेषकर हिन्दुओं के लिए बहुत कष्टकर था। संत चरणदास का जन्म लगभग सन् 1703 में हुआ था। दीक्षा ग्रहण करने के बाद चरणदास ने सन् 1753 में चरणदासी सम्प्रदाय की स्थापना की थी। इसी बीच सन् 1707 में हिन्दुओं के विरोधी मुगल बादशाह औरंजेब की अहमद नगर में मृत्यु हो गई। इसके बाद उसके पुत्र बहादुर शाह की मृत्यु सन् 1712 में हो गई। इसके उपरांत बहुत संघर्ष के बाद मुहम्मद शाह आलम दिल्ली की गद्दी पर बैठा। "सन् 1774 में अलवर के राजा राव राजा प्रताप सिंह के साथ नजफ खां की मदद से शाह आलम के बीच संधि हो जाती है और अलवर राज्य मुगल शासन के अधीन हो जाता है।"[1] सन् 1796 में भारत को नादिर शाही के आक्रमण का सामना करना पड़ा और इसके बाद लगातार सन् 1804 से 1814 तक भारत को अहमद शाह दुरानी के आक्रमण का सामना करना पड़ा। इस दौरान अहमद शाह मराठों को पानीपत में हरा दिया और सम्पूर्ण दिल्ली में हिन्दुओं का कत्लेआम भी करता है। इस पूरे राजनीतिक उथल पुथल में मुगलों और बाहरी आक्रमण कर्ताओं द्वारा हिन्दुओं पर बहुत अत्याचार किया गया। हिन्दुओं की स्थिति इस समय बड़ी दयनीय हो गई। औरंगजेब और उसके उत्तराधिकारियों के समाज विरोधी और धर्मविरोधी आदेशों तले हिन्दू समाज पिसता रहा। धर्म का सामूहिक आचरण या किसी धर्म का प्रचार प्रसार कर सकना असंभव प्रतीत लगने लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय धर्म सगुण मार्ग से रहस्यवाद की ओर उन्मुख होता चला गया और आन्तरिक साधनाएं व एकेश्वरवाद पुनः उस समय के साधकों की साधना के मार्ग के रूप में स्थापित होने लगे। सगुण भक्ति का विकसित रूप अब भी मथुरा, वृन्दावन आदि में प्रचलित था परन्तु भक्तों को प्रायः धर्म-प्रसार के लिए इन स्थानों से बाहर चले जाना पड़ता था। इसी काल के प्रसिद्ध कवि वृन्दावन दास को प्रायः वृन्दावन से बाहर रहना पड़ा था और घनानंद को तो अपनी जीवनलीला ही समाप्त कर देनी पड़ी। इस विषम काल में सगुण और निर्गुण दोनों साधना पद्धतियां बहुत ही निकट आ गईं और स्वामी चरणदास की साधना के रूप में दोनों का अपूर्व समन्वय हुआ। स्वामी चरणदास ने प्रायः समस्त भारतीय उपासनाओं के लिये एक सामान्य साधना पद्धति देने का प्रयास किया, जो उस काल की सबसे बड़ी जरूरत थी।

विषय-विस्तार

स्वामी चरणदास का जीवन परिचय उन्हीं के शिष्यों द्वारा लिखा गया है। श्री रामरूप कृत 'गुरु-भक्ति-प्रकाश', सहजो बाई कृत 'सहज प्रकाश' और श्री जगजीत के 'लीलासागर' ग्रंथ में चरणदास का जीवन परिचय मिलता है। इनमें 'गुरु-भक्ति-प्रकाश' और 'सहज प्रकाश' को अधिक प्रामाणिक माना जाता है। इनका जन्म स्थान अलवर रियासत के अंतर्गत डेहरा नामक गांव माना जाता है। बचपन में इनका नाम रणजीत था। ये इसर जाति के थे। इनके पिता का नाम मुरलीधर और माता का नाम कुंजोदेवी था। 5 वर्ष की आयु में इन्हें शुकदेव के दर्शन हुए। पिता मुरलीधर के दिवंगत होने पर ये कोटकासिम तथा बाद में दिल्ली में निवास करने लगे । 19 वर्ष की आयु में

इन्हें पुनः शुकदेव के दर्शन हुए, जिन्होंने कृष्ण-मंत्र देकर दीक्षित किया।[2] इन्होंने दिल्ली, ब्रज जैसे अनेक स्थानों में धर्म प्रचार किया। चरणदास ने जीवन भर लोगों की मदद की और उन्हें दीक्षा दी। अंत में इनकी मृत्यु सन् 1782 में धर्म प्रचार करते हुए दिल्ली में हुई। दिल्ली में आज भी इनके कई मंदिर और मठ मौजूद हैं। इसमें इनका जीवन चरित वर्णित हैं और इनकी सम्पूर्ण वाणियों को संग्रहित की गई हैं।

स्वामी चरणदास ने अपने जीवन काल में लगभग 21 ग्रंथों की रचना की है। 15 ग्रंथ 'श्री वेंकटेश्वर प्रेस' से प्रकाशित है और 'नवल किशोर प्रेस' लखनऊ द्वारा भी इनके बाकी ग्रंथों का संकलन किया गया है। परशुराम चतुर्वेदी ने इनके 12 ग्रंथों को प्रामाणिक माना है- ब्रज चरित्र, अमर लोक अखंड धाम वर्णन, धर्म जहाज वर्णन, अष्टांग योग वर्णन, योग संदेह सागर, ज्ञान स्वरोदय, पंचोपनिषद, भक्ति पदार्थ वर्णन, मन विकृत करण गुटकसार, ब्रज ज्ञान सागर, शब्द, भक्ति सागर । इसके अलावा भी दानलीला, मटकी लीला, माखन चोरी लीला, श्रीधर ब्राह्मण लीला इत्यादि रचनाओं से भी इनका संबंध जोड़ा जाता है।[3]

चरणदासी सम्प्रदाय मुख्य रूप से गुरु शिष्य परम्परा पर आधारित है। उनकी मान्यता है कि ईश्वर के बाद अगर कोई आराध्य हैं तो वह गुरु हैं। गुरु ही शिष्य को ज्ञान मार्ग पर चल सकता है और शिष्य गुरु के सहारे ही ईश्वर से साक्षात्कार कर सकता है और मोक्ष प्राप्त कर सकता है-

गुरु बिन कौन डुबोवन हारा ।
ब्रह्म समुंद में जो कोई बूडो, छूटि गये सकल विकरा । ।[4]

इस संप्रदाय में गुरु-शिष्य परम्परा दो विचारधाराओं में विभाजित है -

1. बिन्दु कुल
2. नाद कुल

"बिन्दु कुल परम्परा में गुरु-शिष्य के बीच पिता-पुत्र सम्बन्ध होता है। पुत्र बिंदु पुत्र कहलाता है। नाद कुल परम्परा में गुरु शिष्य को दीक्षा देकर उसे पुनः जन्म देता है। नाद कुल का शिष्य ननद पुत्र कहलाता है। चरणदासी सम्प्रदाय में नाद कुल का अधिक महत्व माना जाता है। यह सम्प्रदाय राजस्थान में सर्वाधिक प्रसिद्ध और विस्तृत रहा है।"[5] चरणदासी सम्प्रदाय की उपासना परंपरा राधावल्लभ सम्प्रदाय, निंबार्क संप्रदाय, कबीर पंथ की उपासना परम्परा प्रायः एक सामान मानी जाती है। परशुराम चतुर्वेदी कहते हैं- "दार्शनिक तथा पूजोपासना के विविध आडंबरों पर दृष्टि केंद्रित करने से ज्ञात होता है कि भले ही अंशतः यह परंपरा कबीर का अनुसरण करती हो, किन्तु वस्तुतः यह निंबार्क संप्रदाय के अधिक निकट है।"[6]वर्तमान में विचारों में बदलाव आने के कारण इनके कई सिद्धांतों में परिवर्तन भी आना शुरू हुआ। इस संप्रदाय की कई शाखाएं बनी जो सगुण और निर्गुण दोनों ही विधि से उपासना करते हैं। "चरणदास के मुख्य शिष्यों की संख्या 52 बतलाई गई है। इसी के अनुसार चरणदासी संप्रदाय की 52 शाखाएं भी प्रसिद्ध हैं। किन्तु रूप माधुरी शरण की रचना 'गुरु महिमा' के आधार पर इनके 31 अन्य शिष्यों की चर्चा भी की जाती है। इनकी मृत्यु के बाद दिल्ली वाली गद्दी के प्रधान महंत मुक्तानन्द बने और यही शाखा सर्व प्रधान बन गई।"[7] इनके प्रमुख शिष्यों में दया बाई, सहजोबाई, रामरूप इत्यादि हैं। इस संप्रदाय की गुरु परंपरा को अगर क्रम रूप में देखा जाए तो कुछ इस प्रकार होगी सर्वप्रथम श्री शुक देव जी- श्री चरणदास जी- रामरूप जी- राम कृपालु जी- बिहारी दास जी- ठाकुर दास जी- बलदेव जी- सरस माधुरी जी- रुप माधुरी शरण इत्यादि और इस संप्रदाय की वर्तमान शाखा और गद्दी आज भी दिल्ली में मौजूद है। जिसके प्रमुख रामपाल महराज हैं।

हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान परशुराम चतुर्वेदी ने चरणदासी संप्रदाय को अपनी पुस्तक 'उत्तरी भारत की संत परंपरा' में निर्गुण परंपरा की शाखा में रखा है।[8] यह विचार कुछ असंगत जन पड़ता है क्यों कि इस संप्रदाय के उपासना (सुमिरन) के तत्व सगुण परम्परा से मिलते है इस संप्रदाय को और भी समृद्ध करती है। इस सम्प्रदाय का वर्तमान रूपसगुणोपसना की पद्धति सी मिलती-जुलती है। दिल्ली, अलवर, राजस्थान के कुछ गाँवों में इनका प्रभाव देखा जा सकता है। इस संप्रदाय में विशेष रूप से राधा-कृष्ण की ही आराधना की जाती है। चरणदास ने

भक्ति सागर में निर्गुण-सगुण दोनों ही भक्ति प्रणालियों का विशेष महत्व प्रस्तुत किया है। सगुण ब्रह्म की विशेषता को बतलाते हुए चरणदास कहते हैं-

सगुण ब्रह्म सर्वज्ञ प्रभु, सर्वव्यापी श्याम ।
पुरुषोतम परमात्मा, श्रीवन जिनको धाम । ।[9]

इसके साथ ही चरणदास सगुण और निर्गुण भक्ति का समन्वय करते हुए कहते हैं कि ईश्वर निराकार है और भक्तों के लिए वह धरती पर अवतार लेते हैं-

तुमरीसगरी सृष्टि के कारन रूप हो।
तुम उपजावन पालन मारन रूप हो। ।
ज्यों घट नाना भाँति यों ही संसार है।
फूटे माटी होय सभी यों विचार है। ।
ऐसे ही एक ब्रह्म सकल व्यापक सदा।
नाम अनेक कहाये हम वरनें कहा। ।
निराकार निरलिप्तनिरगुनकरतारहो ।
अपने भक्तनहेतलेत अवतार हो । ।[10]

इनके ग्रंथ 'भक्तिसागर' के अधिकांश भाग में कबीर की तरह हीनिर्गुण, निराकार, निरंजन राम का निर्गुण भक्ति पद्धति मौजूद है। लेकिन स्वामी चरणदास ने कबीर के समान सगुण भक्ति का कहीं भी विरोध नहीं दिखता। अतः इनके यहाँ कबीर के समान अलख निरंजन निर्गुण राम की भी स्तुति देखने को मिलती है-

रामा रामासाईं । ।
अलख निरंजन रूपा ।
तू ही अनेक स्वरुपा ।।
तेरी ज्योति सकल जग छाई ।
तू घट-घट रहो समाई ।।[11]

इस संप्रदाय का मूलभूत सिद्धांत है कि जो निर्गुण है, वहीं सगुण है और वह साकार होकर अनेक आश्चर्यजनक लीलाओं का विस्तार करता है। वह निर्गुण है, सगुण भी है, या फिर दोनों से परे है। उसकी शक्ति, लीला, गुण, भाव आदि अनंत है। अतः श्री चरणदास ने ‘भक्ति सागर’ में ईश्वर के इसी सगुण निर्गुण के सम्मिलित स्वरूप का लीला गान किया है। इसके अलावे भी इन्होंने भगवान के दशावतारों की वन्दना की है, चौबीस अवतारों की कथा का गान भी किया है और उन अवतारों में से राम और कृष्ण का सर्व प्रकार से श्रेष्ठ कला संपन्न माना है । राम और कृष्ण की उपासना विधि पर उन्होंने विशेष रूप से उपदेश दिया है। इन दोनों में से भी कृष्ण की उपासना पर उन्होंने विशेष बल दिया है और स्वामी चरणदास ने उन्हें ही अपना इष्ट बताया है। वे कृष्ण राधिका से निवेदन करते हैं कि वह उन्हें उनकी शरण में ले लें-

श्री शुक मस्तक शिष्य के, धरो कृपा कर हाथ ।
वंशी वट नीचे लखे, श्याम राधिका साथ । ।[12]

स्वामी चरणदास उच्च कोटि के योगी पुरुष थे। इनकी रचनाओं में नाथ पंथ से आया हुआ हठ योग वर्णन भी देखने को मिलता है। इसमें नेती कर्म, बस्ती कर्म, गज कर्म इत्यादि प्रधान है। इस हठ योग से पहचान करने के चरणदास अपने गुरु को नमन करते हुए कहते हैं-

अष्टांग योग वर्णन कियो, मोकोभइपहिचान ।

छहौं कर्म हठ योग के, वरणो कृपा निधान । । [13]

योग साधना के साथ ही इनके मत में शून्यवाद का भी बहुत महत्व है। जिस तरह नाथ पंथ में योग साधना के लिए शून्यवाद को महत्वपूर्ण माना जाता है और कबीर ने भी सबद में शून्यवाद की महत्ता स्पष्ट की है। ठीक इसी प्रकार इनके यहाँ भी शून्यवाद को विशेष महत्व प्रदान किया गया है-

आसान प्राणायाम करि, पवन पंथ गहीलेहि ।
पट चक्कर को छेद करि, ध्यान शून्य मन देही । ।[14]

भक्तिसागर में योग, सबद आदि अनेक मार्गों का वर्णन किया गया है। परंतु चरणदास प्रेम तत्व को ही सब की कसौटी मानते हैं। प्रेम उनकी दृष्टि में सभी धर्मों का स्वामी है, योग से भी बड़ा है, उसी से वैराग्य उत्पन्न होता है। प्रेम से ही त्याग जागता है, प्रेम से ही ज्ञान उपजता है तथा प्रेम के ही वश में ईश्वर हैं। प्रेम के बराबर न योग है, न ज्ञान। इसके बिना सब साधना और ध्यान अधूरे हैं। यह प्रेमा भक्ति सर्वोपरि है। जब प्रेम की डोरी लग जाती है, पल भर भी मन चैन नहीं रहता है। प्रेम से ही राम तत्व की प्राप्ति हो सकती है और प्रेम ही मोक्ष मार्ग है-

प्रेम बराबर योग न, प्रेम बराबर ज्ञान।
प्रेम भक्ति बिन साधवा, सब ही थोथा ध्यान। ।
प्रेम छुटवै जगत कूँ, प्रेम मिलवै राम।
प्रेम करै गति और ही, लैपँहुचेहरिधम। ।[15]

चरणदास ने अपनी रचनाओं द्वारा निष्काम प्रेमा भक्ति का प्रतिपादन किया है और सामाजिक व्यवहार में सदा सत्य चरित्र का समर्थन किया है। नैतिक शुद्धता के साथ जीवन यापन करने का उपदेश इन्होंने हमेशा ही दिया है। शायद यही कारण है कि इनके पंथ को चरित्र प्रधान पंथ भी कहा जाता है। इन्होंने अपनी रचना भक्ति सागर में असत्य भाषण, अपशब्द कथन, कठोर वचन, चोरी, हिंसा, वैर इत्यादि को त्यागने का आग्रह किया है। इन्होंने परिवार सेवा, समाज सेवा, गुरु भक्ति, परमात्मा के प्रति अनुराग रखने का उपदेश दिया है। इनका कथन है कि सर विश्व ब्रह्ममय है। इसलिए किसी भी तत्व को पूजा योग्य समझना अन्य के प्रति उचित नहीं है। साधना का सर्वोत्तम अंग चित्त शुद्धि तथा उचित आचरण है और प्रेम ही इसका आधार स्वरूप है। इस संप्रदाय में जीवन संचालन हेतु कई ग्रंथों से जीवन के विशिष्ट नियमों को संग्रहीत किया गया है। चरणदास ने अपने साहित्य में कर्मवाद को अधिक महत्व दिया है। इनका कहना है की कर्म के प्रभाव से हम अपने आप को स्वतंत्र नहीं कर सकते और जब तक हम धरती पर हैं ताब तक हमें कर्म करते ही रहना है। इनके संप्रदाय में भिक्षा लेना स्वीकार नहीं है।

निष्कर्ष

चरणदासी संप्रदाय एक उचित जीवन जीने की सलाह देता है और जो मानव मूल्यों को भी स्वीकार करता है। यह सम्प्रदाय केवल अतीत का इतिहास मात्र नहीं है, बल्कि अपनी जीवंत शाखाओं, सात्विक जीवन शैली और कठोर नैतिक आदर्शों के कारण समकालीन समाज में भी अत्यंत प्रासंगिक है। सभी धर्मों के प्रति इनका उदार भाव होने के कारण वर्तमान में आज भी यह संप्रदाय सक्रिय है। यह योग की आंतरिक शुचिता और भक्ति के बाह्य माधुर्य का यह संतुलन आज के तनावपूर्ण जीवन में मानसिक शांति और सामाजिक भाईचारे का एक अनुकरणीय विचारधारा प्रस्तुत करता है। इनका प्रचार स्थान दिल्ली, उत्तर प्रदेश, पूर्वी पंजाब और राजस्थान है। इनकी मुख्य शाखा दिल्ली-6 चरण कुंज नाम से आज भी सक्रिय है। इस संप्रदाय के वर्तमान सबसे प्रसिद्ध अनुयायी जगत गुरु रामपाल महाराज हैं। जो आज भी इस गुरु परंपरा से जुड़े हुए हैं और धर्म प्रचार कर रहें हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

[1] सिंह, डॉ. फूल सहारिया, अलवर का इतिहास, प्रथम संस्करण 2016, दिल्ली, पृष्ठ संख्या -53

[2] सहजोबाई, सहज प्रकाश, पंडित शिवनारायण शर्मा (संपादक), खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई-4, संस्करण 2008, पृष्ठ संख्या- 8

[3] चतुर्वेदी, परशुराम, उत्तरी भारत की संत परंपरा, भरतो भंडार लीडर प्रेस, इलाहाबाद, संस्करण 1972, पृष्ठ संख्या - 723

[4] चतुर्वेदी, परशुराम, उत्तरी भारत की संत परंपरा, भरतो भंडार लीडर प्रेस, इलाहाबाद, संस्करण 1972, पृष्ठ संख्या - 506

[5] दीक्षित, त्रिलोकी नारायण, संत चरणदास, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, संस्करण 1961, पृष्ठ संख्या -125

[6] चतुर्वेदी, परशुराम, उत्तरी भारत की संत परंपरा, भरतो भंडार लीडर प्रेस, इलाहाबाद, संस्करण 1972, पृष्ठ संख्या - 725

[7] वही, पृष्ठ संख्या- 721

[8] वही, पृष्ठ संख्या-718

[9] चतुर्वेदी, परशुराम, उत्तरी भारत की संत परंपरा, भरतो भंडार लीडर प्रेस, इलाहाबाद, संस्करण 1972, पृष्ठ संख्या - 33

[10] वही, पृष्ठ संख्या-260

[11] वही, पृष्ठ संख्या-385

[12] वही, पृष्ठ संख्या- 385

[13] वही, पृष्ठ संख्या- 103

[14] वही, पृष्ठ संख्या-102

[15] वही, पृष्ठ संख्या- 210